'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक २० | वाराणसी, शनिवार, १४ फरवरी, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

भोपालनगर (राज०) ४-२-'५९

व्यक्तित्व के विकास के लिए स्वाभिमान का निर्माण करें

आप लोगों को मालूम होगा कि हम आठ साल से पद-यात्रा कर रहे हैं। हमारा उद्देश्य गाँव-गाँव में स्वातंत्र्य लाना है। हर गाँव के लोग अपने पाँवों पर खड़े हो जायँ, ऐसी हमारी इच्छा है। इसलिए अब कोई झुककर प्रणाम करता है तो हमें वह अच्छा नहीं लगता है। खड़े-खड़े प्रणाम करना चाहिए। हम समस्त लोगों को खड़ा करना चाहते हैं, मजबूत बनाना चाहते हैं। जो व्यक्ति आये, उसीके चरणों में झुक जायँ, यह गलत है। आप लोग खड़े होकर जरा प्रणाम तो कीजिये। (सारी जनता ने उठकर प्रणाम किया) ऐसा होना चाहिए। सिर झुकाकर प्रणाम करने के दिन अब लद गये। सीधे खड़े होकर प्रणाम करने के दिन आये हैं। आप नम्रतापूर्वक दोनों हाथों से खड़े-खड़े प्रणाम कर सकते हैं। क्योंकि हम सारे राष्ट्र को खड़ा करना चाहते हैं।

यहाँ जो भाई-बहन बैठे हैं, उनमें बहुत ताकत है। आत्मा की ताकत सबसे बड़ी ताकत है। वह ताकत हर किसीके पास है। इसलिए हम आत्मशक्ति का उपयोग करना चाहते हैं। आप उस आत्म-शक्ति को पहचानें।

कर्तृत्व-शक्ति का अभाव

इन दिनों हमें जो कुछ काम करना होता है, उसके लिए हम सरकार की तरफ देखते हैं, हम कोई संस्था भी खड़ी करते हैं तो सरकार से ही मदद माँगते हैं। सरकार मदद देती है, वह मदद कहाँसे आती है? लोग जो लगान देते हैं, उसीमें से वह मदद आती है। उसी मदद के आधार पर हम संस्थाओं का संचालन करेंगे तो हमारी कोई जिम्मेवारी नहीं रह जायगी। हमारा स्वतन्त्र पुरुषार्थ नष्ट हो जायगा। कर्तृत्व-शक्ति के अभाव में हम कोई भी क्रान्तिकारी कार्य नहीं कर सकेंगे। इसलिए हमें चाहिए कि हम लोगों के पास पहुँचें। जनता का प्रेम हासिल करें। लोगों के आधार पर संस्था खड़ी करें। हम ऐसा नहीं करते हैं, इसी कारण सरकार भी हमारी संस्थाओं के समक्ष कई शर्तें रखती है। सरकार कहती है कि हम तुम्हारी संस्थाओं में ७५ फी सदी सहयोग करेंगे, २५ फी सदी काम जन-सहयोग से करो। फिर हम संस्थावाले जनता के पास २५ फी सदी सहयोग लेने जाते हैं। यदि पूरा सहयोग सरकार की तरफ से ही प्राप्त हो जाता तो हम कभी भी जनता के पास जाते ही नहीं। इससे हमारी पुरुषार्थहीन वृत्तियों का स्पष्ट दर्शन हो जाता है। हम स्वतन्त्र भारत के नागरिक हैं। अब हमें अपने आपको पहचानना चाहिए। अपनी स्वतन्त्र शक्तियों का उपयोग करना चाहिए। इस ओर आप सबका ध्यान जाय तो लोगों में से ही लोगों की सेवा करनेवाली सेना खड़ी होनी चाहिए। लोगों की सेवा करनेवाली संस्था भी लोगों में से खड़ी होनी चाहिए।

यह प्रदेश राणा प्रताप के नाम से प्रसिद्ध है। राणा प्रताप का नाम सारे भारत में मशहूर है। अब राणा के साथ-साथ अन्य नाम तैयार होने चाहिए। उदयपुर की जनता इस तरह का काम कर सकती है। उदयपुर में बीस हजार घर हैं और जिले भर में दो लाख घर हैं। उनमें से आधे घरों में सर्वोदय-पात्र होते हैं तो भी एक लाख सर्वोदय-पात्र होने चाहिए। अभी तक इस जिले में तीन हजार सर्वोदय-पात्र हुए हैं, थोड़े से प्रयत्न से इतना काम हुआ है! सर्वोदय-पात्र के लिए एक सुनियोजित आन्दोलन चलायें तो मास में लगभग एक लाख सर्वोदय-पात्र हो जायँगे। उपनिषद् में कहा है कि थोड़ा-थोड़ा करोगे तो कुछ नहीं होगा 'यो वै भूमा तत् सुखम्, नाल्पे सुखमस्ति' अल्प में सुख नहीं है। १० ग्रामदान यानी अल्प। तीन हजार सर्वोदय-पात्र यानी अल्प। अल्प में सुख नहीं है। खूब होना चाहिए। हरएक हाथ से कुछ-न-कुछ मदद मिलती है, तभी कार्य-शक्ति उत्पन्न होती है। हजारों हाथों की सम्मिलित ताकत से नव-निर्माण का नया द्वार खुलता है।

यहाँ तीन हजार सर्वोदय-पात्र हुए तो सालभर में सात-आठ हजार रुपयों का अनाज होगा। इतनी रकम तो कोई भी धनवान दे सकता है, किन्तु उसके देने से वह सामर्थ्य पैदा नहीं होगा, जो तीन हजार घरवालों के संकल्पित अनाज की प्राप्ति से होगा।

एक मनुष्य में जो शक्ति है, उसको शास्त्रों में नर-शक्ति कहते हैं। अनेकों मनुष्यों की शक्ति में नारायणी शक्ति का आविर्भाव होता है। भगवान की शक्ति पैदा होती है, ऐसा कहते हैं। राणा प्रताप महान नर-शक्ति दिखाकर चले गये। अब सभी मिलकर नारायणी शक्ति आविर्भूत करें तो राणा प्रताप अत्यन्त प्रसन्न होंगे। पुराने जमाने में जो एक-एक व्यक्ति का प्रयत्न होता था, वैसा

अब नहीं हो सकता। विज्ञान ने सबको एक-दूसरे के समीप ला दिया है। इसलिए अब हमें नारायणी शक्ति ही प्रगट करनी है।

नारायणी शक्ति

कल एक गाँव में ७००-८०० घर थे। वहाँ कुल के कुल घरों में सर्वोदय-पात्र रखे गये। यह देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई। अब यह हो सकता है कि एक पूरे का पूरा जिला ही ऐसा हो जाय, जिसके हर घर में सर्वोदय-पात्र हों। रविशंकर महाराज कहते हैं कि उस जिले का नाम बताइये, पर मैं तो उदयपुर जिले का ही नाम लेना चाहता हूँ। यहाँ हर घर में सर्वोदय-पात्र होगा तो अवश्य ही नारायणी शक्ति प्रगट होगी।

स्वराज्य आया, उससे थोड़ी नारायणी शक्ति प्रगट हुई थी। पूरी ताकत अगर लगाते तो हिन्दू-मुस्लिम सभी इकट्ठा हो जाते और अधिक ताकत पैदा होती। परन्तु स्वराज्य मिला और तत्काल झगड़े पैदा हो गये। हिन्दू, मुसलमान, सिख सभी लड़ने लगे। पचास लाख लोग इस देश से पाकिस्तान चले गये, एवं वहाँसे यहाँ आये। उससे थोड़ी नारायणी शक्ति पैदा हो रही थी, वह भी क्षीण हो गयी। लेकिन स्वराज्य तो उसी यत्किञ्चित् नारायणी शक्ति की ही वजह से मिला है।

पहले के जमाने में तलवार से स्वराज्य हासिल करते थे—याने नर-शक्ति से, नारायणी शक्ति से नहीं। गांधीजी के जमाने में नारायणी शक्ति से स्वराज्य प्राप्त किया गया, परन्तु वह शक्ति पूरी तरह प्रगट नहीं हुई, इसीलिए पारस्परिक फूट हुई और स्वराज्य के आरम्भ में ही देश दो भागों में विभक्त हो गया।

मौलाना अबुलकलाम आजाद ने एक छोटा-सा चरित्र लिखा है। उसमें भारत के दो टुकड़े होने के संबंध को लेकर व्यथा प्रगट की गयी है। इसी तरह नारायणी शक्ति भग्न होने से हमारा स्वराज्य क्षीण हुआ। अब फिर से हम नारायणी शक्ति प्रगट करना चाहते हैं। इसलिए आप यह न समझें कि किसीको अर्जी करेंगे, झुककर प्रणाम करेंगे या मदद माँगेंगे। हम सभी इकट्ठे होकर पुरुषार्थ करेंगे, हमारा गाँव हम बनायेंगे, सारा ग्राम एक परिवार बनायेंगे और ग्रामदान की बुनियाद पर ग्राम-स्वराज्य खड़ा करेंगे।

नारायणी शक्ति भगवान की ताकत है। वही ताकत हमारे हृदयों में है। वह अभी छिपी हुई है। हम सभी एकत्रित होकर गाँव का कारोबार अपने आप सँभाल लें तो छिपी हुई नारायणी शक्ति प्रगट हो जायगी।

नारायणी शक्ति कहीं बाहर नहीं है। उसे अपने व्यक्तित्व से ही प्रगट करना होगा। आज हमारे देश में लोग हीन भावना से ग्रस्त हो गये हैं। यह हीन भावना ही पतन का कारण है। इसी की वजह से छोटे-बड़े और मालिक-नौकर का भेद खड़ा होता है। मेरा मानना है कि मानवमात्र समान है। इसीलिए मैंने शुरू में ही कहा था कि एक मानव दूसरे मानव के चरणों में गिरे, यह ठीक नहीं है। मैंने तो आज के युग को सख्य-भक्ति का युग कहा है। अब इस विज्ञान-युग में बड़े-बड़े नेताओं, उपदेशकों आदि की आवश्यकता नहीं है; न ऊँचे-ऊँचे धर्मगुरुओं की ही जरूरत है। आज के विज्ञान के युग में सब मानव समान होकर ही जी सकेंगे।

इसलिए आप सब सज्जनों से मेरी यह सलाह है कि व्यक्तित्व के विकास के लिए स्वाभिमान का निर्माण करें। बच्चे, बूढ़े, भाई, बहन, हिन्दू, मुस्लिम, पारसी, सिख, जैन, बौद्ध आदि सभी धर्मोंवाले एक साथ बैठकर इस बारे में सोचें, ताकि देश में नारायणी शक्ति पैदा हो।

प्रार्थना-प्रवचन वल्लभनगर (राज०) २-२-'५९

राष्ट्र-निर्माण के लिए जन-जागृति पैदा करना आवश्यक

एक जमाना था, जब दुनिया के अधिकांश देशों में राजाओं का शासन था। हमारे यहाँ भी राजा-महाराजा थे। सारी सत्ता उनके हाथों में थी। प्रजा के हित-रक्षण का उत्तरदायित्व राजाओं पर था। प्रजा राजाओं को कुछ कर देती थी। लोग राज्यनिष्ठा को एक धर्म समझते थे। राजाओं के प्रति लोगों का एक निश्चित मत था। इससे जब-जब अच्छे राजा होते थे तो प्रजा सुखी होती थी और खराब राजा होते थे तो प्रजा दुःखी होती थी। लोगों को सुखी बनाना या दुःखी बनाना राजाओं के हाथ की बात थी। इस प्रकार का अनुभव प्रजा को बार-बार आता रहा। हजारों वर्षों की अनुभूतियों के पश्चात् लोगों ने यह तय किया कि "राजाओं के अनियंत्रित अधिकारों को प्रजा के हाथों में सुरक्षित कर देना चाहिए, क्योंकि राजाओं के हाथों में सर्वाधिकार रहने से कभी कड़ुआ तो कभी मीठा अनुभव आता रहता है। इसके अतिरिक्त जनता भी केवल जड़, अचेतन जैसी बनी रहती है। सभीका नसीब चन्द लोगों के हाथों में रहता है।"

पुराने जमाने में सहजीवन की प्रथा नहीं थी। एक गाँव का दूसरे गाँव के साथ संबंध भी मुश्किल से ही रहता था। जिसे राष्ट्र कहते हैं, वैसा तो कुछ था ही नहीं। राष्ट्र की कल्पना मात्र थी। 'भारतवर्ष बड़ी पुण्यभूमि है' ऐसा ऋषि-महर्षि कहते थे। उन्होंने सारे भारत को एक बनाने के लिए युक्ति भी निकाली थी। महर्षि लोगों को यात्रा करने की प्रेरणा दिया करते थे। 'काशी बड़ा तीर्थस्थान है, रामेश्वर पुण्यधाम है'। अतः काशी के लोगों को रामेश्वर का दर्शन किये बिना तसल्ली नहीं होती थी और रामेश्वर के लोगों को काशी पहुँचे बिना संतुष्टि नहीं होती थी। उन दिनों यातायात के अच्छे साधन नहीं थे। लोगों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचने में काफी समय लगता था। उन्हें तप के रूप में सभी कुछ सहन करना पड़ता था। फिर वे यात्रा करते थे। ऐसी तीर्थ-यात्राओं के मूल में उद्देश्य भारत दर्शन का ही रहता था। ऋषि सोचते थे कि यात्राओं के न होने से इतना बड़ा देश कल्पना मात्र रह जायगा। देश की एकता नहीं बनेगी। ऋषि-महर्षियों ने अपने ज्ञान से यह जाना था, किन्तु समस्त देश एक नहीं था। उन दिनों एक राष्ट्र बनने के अनुकूल साधन भी नहीं थे। इसलिए उस समय समाज नहीं था। समाज की शक्ति भी नहीं थी। सारा व्यक्तिवाद था।

कोई जबर्दस्त मनुष्य खड़ा हो जाय, लोगों को काबू में कर ले और फिर उनपर अधिकार चलाये, कुछ सुविधाएँ भी कर दे तो लोग उसको राजा के तौर पर भी मानने लगे। इस तरह की परिस्थिति थी। उस वक्त चर्चा चलती थी कि "कालो वा कारणं राज्ञः, राजा वा कालकारणम्।" राजा काल को बनाता है या काल राजा को बनाता है? चर्चा की फलश्रुति थी "राजा कालस्य कारणम्" राजा काल को बनाता है।

जनता पर सत्ता हावी न हो

अब जमाना बदल गया है। आज तो कोई भी कह सकता

है कि जनता और लोक-शक्ति ही समर्थ शक्ति है। यद्यपि इस प्रकार विचारों में बुनियादी फर्क हुआ है, फिर भी जहाँ हिन्दुस्तान तथा बड़े-बड़े सुधरे हुए प्रदेशों का ताल्लुक है, वहाँ तक अभी भी सारी सत्ता सरकार के हाथ में है। जनता पहले जैसी ही बनी बैठी है। खेत में ज्वार बोना है या गेहूँ? इसमें बैलों को कोई दिलचस्पी नहीं है, न बैलों की कोई राय ही पूछी जाती है, किसान ही तय करता है कि खेत में क्या बोना है और वह बैलों को ले जाकर जोतता है, ठीक उसी तरह आज भी दुनिया का काम होता है। लेकिन लोगों के नाम से चलता है। हर पाँच साल के बाद एक बार लोगों की सम्मति ली जाती है। वह भी कैसे ली जाती है?

अभी तीन-चार दिनों पूर्व मैंने उदयपुर के निकटवर्ती एक ग्राम में पूछा कि कहो भाई, वोट डालने गये थे? गाँववाले बोले, हाँ गये थे। वहाँ चार-पाँच पेटियाँ पड़ी थीं। उनमें से किसी एक पेटी में वोट डाल दिया। वोट माँगनेवाले उन लोगों को मोटर में बिठाकर ले गये होंगे और कहा होगा कि डालो चिट्ठा। उन्होंने डाल दिया होगा। यह बात हमने अभी पहली बार नहीं सुनी है। इससे पूर्व भी कई बार सुन चुके हैं। मत प्राप्त करने का एक नाटक चलता है। लोगों की हालत ऐसी है कि वे हर बात में सरकारपरस्त हैं। आज तो रचनात्मक कार्यकर्त्ता जितना भगवान का नाम नहीं लेते, उतना सरकार का नाम लेते हैं। उनको नये जमाने में परमेश्वर की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है। नये जमाने में सरकार की जरूरत है। खादी, ग्रामोद्योग आदि काम बिना सरकार के नहीं चलेंगे। कोल्हू चलाने में बैल चाहिए, तेल चाहिए, यन्त्र चाहिए, घर का भी उपयोग होगा, सरकार का उपयोग तो होगा ही, परन्तु भगवान का उपयोग उसमें नहीं होगा। इसलिए भगवान की क्या जरूरत है? सरकारी सहयोग चाहिए। कहीं भी कोई बात निकले तो सरकारी मंत्री को बुलाते हैं। किसीको अध्यक्ष बनायेंगे और आशीर्वाद लेंगे! वे आशीर्वाद देने के काबिल कैसे बन गये? सरकार में होने से आशीर्वाद देने के लायक हो गये? औरों की तो बात ही क्या कहनी है, इस प्रकार अभी समस्त रचनात्मक कार्यकर्ता भी चाटुकार और खुशामदखोर बन गये हैं। अपनी सारी स्वतन्त्रता भूल गये हैं। जनता का वह हाल एवं रचनात्मक कार्यकर्ताओं का यह हाल!

रचनात्मक कार्यकर्त्ता चाटुकार बन गये

राजनैतिक पक्षवालों से ज्यादा बुद्धू तो मैंने कहीं देखे ही नहीं हैं। वे हर किसी काम को सत्ता के हाथ में मानते हैं। सभी दलोंवाले यही सोचते हैं कि आज सत्ता कांग्रेस के हाथ में है, परन्तु दस-पाँच वर्षों के अनन्तर हमारे हाथों में आयेगी, तब हम सेवा करेंगे। बीच के इस कार्य-काल में शासनासीन पक्षवालों की कमजोरियों का प्रचार करेंगे, ताकि अगले चुनाव में हम निर्वाचित हो जायँ। अरे भाई! आपको क्यों चुनेंगे? जिन्हें चुना, उन्होंने गलती की तो आप गलती नहीं करेंगे, इसका क्या भरोसा है? क्या जनता बराबर अपने नसीब को आजमाती रहेगी कि अभी इनको चुनकर देखो और कभी उनको चुनकर देखो? जिनको चुनकर सुखी हुए, उनकी स्तुति करें और जिनको चुनकर दुःखी हुए, उनकी निन्दा करें? इतना ही जनता का काम है? 'जनता का भला जनता स्वयं नहीं कर सकती, सरकार ही, सत्ता ही कर सकती है,' ऐसा इन बुद्धुओं ने मान रखा है। परिणाम यह है कि देश में झगड़े बढ़ रहे हैं। कोई न कोई जानवर जख्मी होता है तो गीध को खाने का मौका मिलता है, उसी तरह काक-दृष्टि रखकर दोष देखते रहोगे और सेवा नहीं करोगे तो चुनकर कैसे आओगे? आखिर में कहते हैं कि हाँ भाई, सेवा करनी पड़ेगी। उसके बिना सत्ता हाथ नहीं आयेगी। सेवा याने बहुत कड़ुई दवा! लेकिन खैर। बीमारी आयी है तो कड़ुई दवा के बिना रोग जायगा नहीं, इसलिए बाध्य होकर सेवा करनी पड़ेगी। सेवा में मिठास नहीं है, कडुआपन है। सत्ता मधुर है। सत्ता के जरिये सेवा करेंगे। वह तो बोलना ही पड़ता है। बिना बोले चलता ही नहीं है। राजा-महाराजाओं ने भी जो पार्टी बनायी, उसका नाम भी "गणतन्त्र" दिया है। याने लोगों की पार्टी है। वास्तव में है राजाओं की पार्टी। इन दिनों हर कोई काम लोगों के नाम से करना पड़ता है। जैसे अन्दर तो जो भी मामला हो, लेकिन हरएक व्यापारी को अपने चौपड़े पर "श्री हरि" लिखना ही पड़ता है, वैसे ही अभी हर काम लोगों के नाम से चलता है। यह सिर्फ अपने देश में नहीं है, दूसरे देशों की भी यही हालत है। प्रजा केवल गुलाम बन गयी है।

अपने यहाँ गरीबी है, भुखमरी है, अज्ञान है, लेकिन जिन देशों में ऐसा नहीं है, वहाँ भी बहुत सारी सत्ता सरकार के हाथों में दे रखी है। सरकार का भी नाम है 'लोकशाही', पर है वह सत्ता चन्द लोगों के हाथ में ही। यह ठीक है कि पाँच साल के बाद सत्ता परिवर्तन कर सकते हैं, परन्तु पाँच साल में ये शासनासीन लोग इतने काम कर डालते हैं कि दूसरी सरकार के लिए उसमें परिवर्तन करना सम्भव नहीं रह जाता। मान लीजिये कि एक सरकार ने अरबों रुपये का व्यवहार दूसरे देश के साथ किया और वह निर्वाचन में हार गयी तो क्या आनेवाली नयी सरकार उसको अधूरा छोड़ देगी? अधूरे कार्य की पूर्ति करना नयी सरकार के लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य हो जायगा। इस जमाने के पाँच साल पुराने जमाने के १०० साल के बराबर हैं। इसलिए पाँच साल में ये लोग अच्छे और बुरे काम कर सकते हैं।

औरङ्गजेब बड़ा जुल्मी राज्यकर्ता कहलाता है। लेकिन उसने क्या जुल्म किया? आसाम या हैदराबाद की सरकार को हुक्म करता था तो वह हुक्म पहुँचते-पहुँचते एक महीना लग जाता था। उत्तर पहुँचने में भी एक महीना चला जाता था। इस तरह दो महीने तो पत्रापत्री में गये। उसके बाद यदि सरदार ने किसी बात को मानने से इन्कार किया तो बादशाह को फौरन फौज भेजकर सरदार को नियन्त्रण में लेना पड़ता था। वहाँ फौज ले जाय, सरदार का मुकाबला करे, तब होता था। इस तरह होते-होते महीनों चले जाते थे। परन्तु आज तो देहली, लन्दन या मास्को में हुक्म हुआ तो उसी दिन अमल में आये, ऐसे साधन मौजूद हैं। आप लोगों को याद होगा कि सन् ४२ के आन्दोलन में कुल-के-कुल लोगों को एक दिन में गिरफ्तार कर लिया गया था। औरङ्गजेब में वह शक्ति कहाँ थी? आजादी की लड़ाई के समय चन्द घंटों में सारे देश के नेता लोगों को जेल में धर दिया गया। उस बात को भी आज सत्रह साल हो गये। इतने में विज्ञान इतना आगे बढ़ रहा है कि गांधीजी के जमाने में जो काम करने में चन्द घंटे लगते थे, वह काम आज चन्द मिनटों में हो सकते हैं। इतनी सत्ता लन्दन, मास्को, वाशिंगटन और देहली की सरकार के हाथ में है। पाँच साल में सौ साल का काम कर डालने की क्षमता आज की सरकारों में है। अब फल इसका अच्छा हो या बुरा, यह शासनकर्ताओं की अक्ल पर निर्भर करता है।

यह नाममात्र की लोकशाही

मैं कहना चाहता हूँ कि आज सारी दुनिया में नाममात्र की लोकशाही चलती है। परन्तु सत्ता कुल की कुल सरकार के हाथ में

है। सरकार का सारा दारोमदार लश्कर पर है और आज आप क्या देखते हैं? पाकिस्तान में लश्कर ने सारी सत्ता अपने हाथ में ले ली है। खैर, पाकिस्तान तो कोई खास सिद्धान्त पर खड़ा हुआ देश नहीं है, परन्तु फ्रान्स, जहाँसे सारी दुनिया को लोकशाही का तत्त्वज्ञान मिला, जहाँ रूसो, वाल्टर जैसे साहित्यिक और विचारक हो गये, वहाँ देखते-देखते लोकशाही लश्करशाही में परिवर्तित हो गयी। इस तरह देखते-देखते लोकशाही का रूपान्तर राजशाही और लश्करशाही में हो सकता है। जानवर एक ही है। जहाँ उसकी अच्छी खिलाई-पिलाई होती है, वहाँ वह तगड़ा दीखता है, जहाँ नहीं होती है, वहाँ वह कमजोर दीखता है। एक ही मनुष्य हजामत करता है तो एक-सा दीखता है, नहीं करता है तो दूसरा दिखता है। इस तरह चाहे लोकशाही नाम हो या राजशाही, उसका रूपरंग एक ही है। जनता की शक्ति विकसित हो, ऐसी कोशिश जब तक नहीं होती है, तब तक चाहे चुनाव का ढोंग करके कुछ लोगों को वहाँ भेजें या राजवंश चले, उसमें बहुत ज्यादा फर्क नहीं पड़ेगा।

आप जितने भी भाई-बहन यहाँ उपस्थित हैं, उन सबमें स्वतंत्र ताकत है। हमारे देश के सभी गाँवों में भी स्वतंत्र ताकत है। यह ताकत जब तक हम नहीं जगाते, तब तक सर्वतोमुखी पराधीनता बनी ही रहेगी। अभी देहली में कुछ अच्छे लोग हैं, जिनका गांधीजी के साथ संबंध था और जो आजादी की लड़ाई में योद्धा रहे हैं। उन अच्छे लोगों के रहते हुए तथा अच्छी कोशिश करते हुए भी तब तक कोई नतीजा नहीं निकलेगा, जब तक लोकशक्ति जागृत नहीं होगी।

ये लोग जब कभी मुझे मिलते हैं तो सुनाते हैं कि "यहाँ हम चीन जैसा नहीं कर सकते हैं। एक बात का निर्णय किया और तदनुरूप अमल करवाना यहाँकी लोकशाही में नहीं होता है।" इसे वे लोकशाही की न्यूनता बताते हैं। इसपर मैं कहता हूँ कि इस लोकशाही को क्यों स्वीकार किया है? अगर इसमें कमी दीखती है तो फिर राज्यशाही ही अच्छी है। वे कहते हैं कि राजशाही तो अच्छी नहीं है। तो फिर यह लोकशाही की कमी नहीं, बल्कि खूबी है। लोगों को जगाये बिना अच्छा काम करने की शक्ति लोकशाही में नहीं है। उपनिषद् में लिखा है कि 'स्वयं अकुरुत तस्मात् सुकृतम्।' उसने स्वयं वह काम किया, इसलिए वह सुकृत हुआ। अच्छा काम वह है, जो मनुष्य अपने हाथों से करता है। दूसरों से अगर करवाया तो वह परकृत हो जाता है। जो स्वकृत होता है, वह सुकृत होता है। हम करें, वह अच्छा होता है, दूसरा करे, वह अच्छा नहीं होता। इसलिए लोकशाही की खूबी है कि इन लोगों को जगाना पड़ता है। गाँव-गाँव में जाना पड़ता है। जैसे कबीर, शंकर, रामानुज, बुद्ध महावीर आदि महापुरुष गाँव-गाँव घूमे थे, उसी तरह गाँव-गाँव जाना होगा, आत्मज्ञान का संदेश पहुँचाना होगा, आत्मशक्ति जगानी पड़ेगी, तब काम होगा। अब इन सुस्त लोगों से काम नहीं होगा। इसलिए ऐसे कार्यकर्ता चाहिए, जो घर-घर पहुँचें और लोगों में ज्ञान पहुँचायें।

जन-संपर्क के लिए पदयात्रा

पहले कुछ लोग कहते थे कि यह कैसा दकियानूस मनुष्य है, जो हवाई जहाज के जमाने में पैदल घूमता है! अब पेपर में क्या पढ़ते हो? २०००० कांग्रेस मैन बिहार में पदयात्रा कर रहे हैं। आखिर जनता कहाँ रहती है? हवाई जहाज में तो हवा खायेंगे। एक छोटा-सा प्रस्ताव नागपुर कांग्रेस में पास हुआ। वह हरएक के पास पहुँचना चाहिए, इसलिए पदयात्रा। क्या पिछले १० वर्षों में ऐसा कोई भी प्रस्ताव पास नहीं हुआ था, जिसे जनता तक पहुँचाने की जरूरत हो? अब ५ दिन की पदयात्रा निकली है। ३६५ दिनों में से ५ दिन अच्छा है। "स्वल्पारंभः क्षेमकरः।" पाँच दिन के लिए क्यों न हो? जनता के पास पहुँचेंगे तो जनता सीधा सवाल पूछेगी कि यह काम कैसे हुआ? बाबा तो हाथ झाड़कर कह देगा कि इन गलतियों के लिए मैं जिम्मेवार नहीं हूँ। आपने जिनको मत देकर चुना है, वे जिम्मेवार हैं। लेकिन आपको तो जनता सीधा पूछेगी कि यह काम क्यों किया? अच्छा रहेगा, जग जाओ और जनता को देखो!

मैं कहना यह चाहता था कि भारत में बीते युग में ज्ञान-प्रचार होता था। भाट, चारण, कवि, आचार्य, भक्त, संत पुरुष गाँव-गाँव घूमते थे और लोगों के पास कविता के जरिये ज्ञान पहुँचाते थे। आज सारा ज्ञान कॉलेज व विश्वविद्यालय के कपाटों में कैद हो गया है। वह लोगों के पास पहुँचता नहीं है। याने लोगों के पास दौड़े जायँ, ऐसी ज्ञानमहिमा प्रकट नहीं हो रही है, जो जितना जानता है, उतना मूल्य माँगता है। ज्ञान बाजार में आ गया है? ज्ञान का कभी बाजार-भाव सुना था? जैसे शेयर-बाजार में कपास का भाव आता है। ३७५ दो बजे, ३७४ तीन बजे, वैसे ज्ञान की बाजारू कीमत होती है। इस तरह सारा दारोमदार पैसे पर है। जिसको जितना ज्यादा ज्ञान, उतना उसका वेतन ऊँचा। थोड़ा ज्ञान, थोड़ा वेतन। इस तरह पुराने ढंग का सारा चलता है। लोकशाही नये ढंग की है। परन्तु रवैया पुराना ही है।

तरीकत और हकीकत

बिहार के लक्ष्मीबाबू अपने राष्ट्रपतिजी के ४० साल के पुराने परिचित मित्र थे। वे कहते थे कि वे जब राष्ट्रपतिजी से मिलने जाते थे तो वे 'इन्ट्रोड्यूज' किये जाते थे कि आप हैं बिहार के लक्ष्मीबाबू। लक्ष्मीबाबू भी हँसे और राजेन्द्रबाबू भी हँसे। अब वह नया शख्स, जो इन दोनों का परिचय एक-दूसरे से करवा रहा था, उसका परिचय कितना था? लेकिन चलता है पुराना तरीका। इन सारे तरीकों ने हकीकत को खत्म कर डाला है। तरीकत और हकीकत, ये दो शब्द इस्लाम में आते हैं। तरीकों ने सत्य को खत्म कर डाला है ऐसी उलझनें पैदा होती हैं और उलझनों के कारण सत्य खत्म हो जाता है।

तब तक ताकत पैदा नहीं होगी, जब तक इन अपढ़ गिने जानेवाले भाई-बहनों में आत्मशक्ति प्रगट न कराई जाय। आज की लोकशाही नाममात्र की लोकशाही है, वास्तव में वह राजशाही है, जो आज अमरीका, रूस, पाकिस्तान और हिन्दुस्तान में है। पाकिस्तान में वह नंगे रूप में दीखती है, उतनी यहाँ नहीं दीखती है, ढँके हुए रूप में दीखती है। लश्कर के पीछे जो खर्च हो रहा है, उसीकी बात निकलती है तो पार्लमेण्ट के सब सदस्य देखते हैं कि देश की रक्षा ठीक-ठीक हुई है कि नहीं? आधुनिक हथियार हैं या नहीं? तात्पर्य यह है कि सारा दारोमदार सेना है। जिस शाही का दारोमदार सेना हो, उसका रूप फिर राजशाही, लोकशाही, सरंजामशाही, साम्यवाद, समाजवाद कि कल्याण-राज, जो कुछ भी हो वह है एक ही। उसमें कोई फर्क नहीं है। क्योंकि सबका दारोमदार सेना है। विधेयक के अमल के लिए लश्करी सत्ता अर्थात् कानूनी सत्ता। कानून के पीछे लश्कर रहता है। यह बात जब तक रहेगी, तब तक लोकशाही व्यर्थ की बात है।

अभी श्रीमालीजी (केन्द्र-शिक्षामंत्री) हमारे साथ हैं, आज हमने उनसे पूछा कि आप यहाँके रहनेवाले हैं? अब हमें यह अक्ल होनी चाहिए थी कि वे यहाँ स्वागत के लिए आये हैं तो उदयपुर के ही हैं। राजस्थान के हैं इतना मालूम था। अब हम इनसे ही पूछेंगे (सभा में शिक्षा-मंत्री श्रीमालीजी उपस्थित थे)

कि उदयपुर से दस मील की दूरी पर अवस्थित गाँव की एक बहन कहती है कि गांधीजी आजकल शायद उदयपुर में होंगे और एक जवान लड़के को तो गांधीजी का नाम तक मालूम नहीं है। तब क्या किया जाय? परन्तु वे भी क्या करें? जब तक स्वतंत्र सेवकों की सेना खड़ी नहीं होगी, तब तक कोई काम नहीं होगा। इसीलिए हम शान्ति-सैनिक और ग्रामदान की बात करते हैं।

ग्रामदान याने गाँव का समग्र कारोबार गाँववाले चलायें। आजकल सरकारवाले कहते हैं कि अब पंचायत को ज्यादा सत्ता देंगे। भले आदमी! तुम सत्ता देनेवाले हो कौन? हम ही ने तुमको सत्ता दी है। फिर भी जो हो, आज तो ऊपरवाले ही नीचे की ओर सत्ता दे रहे हैं। नीचे के हाथ तैयार होंगे, तभी सत्ता प्राप्त कर सकेंगे। इसलिए गाँवों को मजबूत करना होगा, ग्राम-स्वराज्य की आकांक्षा उत्पन्न करनी होगी, अतएव ग्रामदान का काम करना है। ग्रामदान की सक्रिय सम्मति का प्रतीक है—सर्वोदय-पात्र।

●●●

प्रार्थना-प्रवचन

ऋषभदेव (राज०) २७-१-'५९

जैन लोग अहिंसा का वैज्ञानिक अनुसन्धान करें

यह बड़ा तीर्थस्थान है। यहाँ सैकड़ों गाँवों के लोग यात्रा के लिए आते हैं। अहिंसा का संदेश इस स्थान से जाता है। ऋषभदेव बहुत प्राचीन काल में हो गये। उनका नाम उतना ही मशहूर है, जितना आज के किसी महापुरुष का। महावीर भी बहुत प्राचीन काल में हो गये। लेकिन उनके भी पहले ऋषभदेवजी हो गये। ऋषभदेवजी की अपेक्षा से देखा जाय तो महावीर स्वामी आजकल के हैं। महावीर स्वामी को ढाई हजार साल हो गये हैं। लेकिन ऋषभदेव उनसे भी अधिक पुराने काल के हैं। यह तीर्थस्थान भी उतना ही पुराना है।

पड़ोसी से प्यार करो

ऋषभदेव कौन-सी बात बताते थे, जिसे लोग याद करते हैं? वह थी 'अहिंसा'। दूसरे को तकलीफ न देना इतना ही अहिंसा का अर्थ नहीं है। अहिंसा का मतलब है, जितना प्रेम हम खुद पर करते हैं, उतना ही प्रेम भगवान की सब सृष्टि पर करना। अपने पड़ोसी पर उतना ही प्यार करना। इसमें अहिंसा है। अपने समान ही सबपर प्यार करना अहिंसा है। यह बात हिंदुस्तान में सभी लोगों को प्रिय है। अनेक संतों ने इसे दुहराया है और समझाया है कि अपने समान सबको देखना चाहिए, मानना चाहिए। एक विचार के तौर पर इसे सब लोग मानते हैं। हिंदुस्तान में ऐसा कोई मनुष्य नहीं है, जो इसे कबूल न करता हो। परन्तु कबूल करना एक बात है और उसपर अमल करना दूसरी बात है।

अहिंसा के आचरण का सवाल उठते ही हम कहने लगते हैं कि बात तो ठीक है। परन्तु इसपर हम अमल नहीं कर सकते हैं। हम तो गृहस्थ हैं, संसारी हैं, बाल-बच्चेवाले हैं। हमारी आदतें बन चुकी हैं। इसलिए हम पड़ोसी पर इतना प्यार नहीं कर सकते हैं, जितना अपने बाल-बच्चों पर और स्वयं अपने शरीर पर करते हैं। इतना प्यार करना प्राणियों को इस जन्म में संभव नहीं होगा। हमारे पूर्वजों ने भी तो यही कहा है कि 'अपने तनय पर प्यार करो।' यह चीज हम पसंद करते हैं और उनकी बात हम मान लेते हैं। कोई महापुरुष हमें ऐसा मिल जाय, जिसके आचरण में यह बात है, उसकी हम इज्जत करते हैं, पूजा करते हैं और उसके दर्शन से पवित्र हुए, ऐसा भी मानते हैं। परन्तु वह चीज महापुरुषों के लिए, संन्यासियों के लिए, भिक्षु-भिक्षुणियों के लिए, श्रमण-श्रमणियों के लिए मानते हैं। शास्त्रकारों के सामने सवाल आता है कि इस प्रकार किसी विचार का लोग आदर करें, किन्तु उसपर अमल न करें तो लोगों को क्या लाभ होगा? इसलिए शास्त्रकारों ने एक बीच की राह निकाली, ताकि अपने समान आहिस्ता-आहिस्ता सबको प्यार करने की तालीम मिल सके। एक-एक सीढ़ी ऊपर चढ़ें, आरोहण करें तो ऐसा एक रास्ता बन जायगा, राह खुल जायगी और लोग दूसरों पर प्यार करना सीखेंगे। ऐसी बीच की राह उन्होंने खोजी। अब सब प्राणियों पर इतना-इतना करो, सारी सृष्टि पर अपने समान प्यार करना चाहिए। यह चीज जैसे एक सितारा नजर के सामने रखकर चलते हैं, वैसे ध्येय को देखकर चलना है। सितारे पर पाँव नहीं रखते, नजर रखते हैं। चलते हैं जमीन पर, वैसे ही उस दिशा में हम चलेंगे, जो दिशा शास्त्रकारों ने बतायी है। इसलिए शास्त्रकारों ने कहा है कि अपने समान सारी सृष्टि को देखो और सबसे प्रेम करने के लिए अपने पड़ोसी पर अपने समान प्यार करो। अपने गाँव पर अपने समान प्यार करो। यह पड़ोसी अपना ही है, यह गाँव अपना ही है।

कुटुम्ब-विस्तार

आज हम पास-पास रहते हैं, परन्तु एक-दूसरे की भलाई का नहीं सोचते हैं। गाँव में कोई बीमार हुआ, कोई जख्मी हुआ तो उसे दुःख में हमें सान्त्वना देनी चाहिए। वैसे सबपर प्यार करना सीखो। गाँव की भलाई के साथ तुम्हारा भी भला हो सकता है। गाँव में अगर बुराई हुई तो तुम्हारी भी बुराई हो सकती है। गाँव में कोई बीमारी आयी तो वह तुम्हारे घर में भी आ सकती है। बीमारी गाँव में फैल सकती है, वैसे ही आग भी गाँव में फैल सकती है। एक को दुःख हुआ तो दूसरे को भी दुःख हो सकता है। गाँव में अच्छी बारिश हुई तो सबकी फसल बढ़ सकती है। इस तरह गाँव में सबका भला और सबका बुरा एक साथ हो सकता है। इसलिए गाँव को अपने कुटुम्ब का एक विस्तार समझें। जिसे हम शरीर कहते हैं, वह हमारा विस्तार है, हम नहीं हैं। हम तो शरीर के अन्दर रहनेवाले हैं, अन्तरात्मा में रहनेवाले हैं और इन्द्रियों से काम लेनेवाले हैं।

हम शरीर थे तो हमारा विस्तार हो गया, जिसे संस्कृत में 'तन' कहते हैं याने तनय, तानना, फैलाना। मतलब हमारे शरीर का ही तनाव याने हमारा बच्चा है। फिर इस तनु का और विस्तार होता है तो तनय होता है। उस लड़के का भी लड़का होता है याने उसका भी विस्तार होता है। जैसे हम शरीर नहीं हैं, यह हमारा विस्तार है, वैसे ही लड़का भी हमारा विस्तार ही है। सन्तान शब्द भी तन धातु पर से आया है। जैसे संतान तनु का विस्तार है, वैसे ही अपना समाज अपना ही विस्तार है, ऐसा समझो और उसपर प्यार करना सीखो। क्या हम यह कर सकते हैं? अपनी शक्ति के अनुसार हम कर सकते हैं, यह उसका उत्तर नहीं है। परन्तु इसका उत्तर देने का समय अब आया है। यहाँ मेरे सामने माता-पिता दीखते हैं। उनको अगर कहा जाय कि तुम्हारा बालक तुम्हारा ही विस्तार है, इसलिए उसपर वैसा ही प्यार करो, जैसा अपनेपर कर सकते हो, क्या यह कर सकते हो? यह काम कठिन है कि आसान?

इसपर माताएँ कहेंगी कि 'तुमने बहुत कम ही माँग की है। हम इससे ज्यादा कर सकती हैं। माताएँ अपने बच्चों पर अपने से ज्यादा ही प्यार करती हैं। क्या हम कम प्यार करें, ऐसी सिखावन आप देना चाहते हैं?'

हम तो अपनेपर जितना प्यार करती हैं, उतना ही नहीं, बल्कि उससे ज्यादा प्यार बच्चों पर कर सकती हैं। इस तरह यह माताएँ जवाब देंगी। खैर! इस तरह ज्यादा प्यार करने की बात ही जोड़ दो। वह माताओं के नाम पर पुण्य लिखा जायगा। इससे भी बड़ी बात यह हो गयी कि माताएँ शास्त्रकारों से भी आगे बढ़ गयीं। लेकिन जैसे बेटे पर माताएँ समान प्यार करती हैं, वैसे पड़ोसी पर भी समान प्यार करना चाहिए। रबर को खींचते हैं तो वह लंबा हो जाता है, रबर में तनाव होता है। वैसे अपने बच्चों पर जो प्यार करते हैं, उनका विस्तार करने की जरूरत है, वैसा ही प्यार सारे समाज पर करने की तालीम हमें मिल रही है। शास्त्रकारों ने जिसे अहिंसा कहा था, बीच की राह दिखाई थी, उसपर हम चलें तो धीरे-धीरे सारी सृष्टि पर वैसा ही प्रेम कर सकते हैं। इसकी मिसाल हमें मिल जायगी।

अहिंसा का क्या अर्थ है? 'आत्मवत् सर्वभूतेषु'—सब भूतों पर उतना ही प्यार करो, जितना अपने पर करते हो। घर के समान पड़ोसी को समझो और घर के समान ही ग्राम को समझो। यह उपाय बहुत कठिन है, ऐसा कोई कहेगा तो उसे मैं कहूँगा कि तुम्हारा कहना इस जमाने के लायक नहीं है। विज्ञान का जमाना है। विज्ञान के जमाने में दूर देशों के लोग भी नजदीक-नजदीक आते हैं। देशों के बीच जो अन्तर हैं, वह टूट रहे हैं। एक जमाने में जो समुद्र देशों को तोड़ता था, वह आज जोड़ रहा है। अमेरिका और जापान के बीच आठ हजार मील लंबा पैसिफिक महासागर है। उसने आज तक अमेरिका और जापान को अलग-अलग रखा था, तोड़ा था। परंतु वही सागर आज दोनों को जोड़ रहा है। दोनों राष्ट्र पड़ोसी हैं, ऐसा कहा जाता है। दोनों के बीच अन्तर आज उतना ही है। पुराना ही पॅसिफिक महासागर है। उसकी लम्बाई, चौड़ाई कुछ कम नहीं हुई है। परन्तु आज वह कम मालूम हो रही है। जमाने की रफ्तार बहुत बढ़ी है। ऐसे साधन आज हाथ में आ गये हैं कि २४ घंटे में दुनिया के इस सिरे से उस सिरे तक जा सकते हैं। यह पृथ्वी २४ हजार मील की घेरेवाली है। ऐसे साधन, हवाई जहाजे हाथ में आ गये हैं कि २४ घंटे में कुल पृथ्वी की प्रदक्षिणा की जा सकती है। ऐसे विज्ञान के जमाने में 'सारे गाँव को एक परिवार मानना कठिन है' यह कहनेवाले को कहा जायगा कि तुम इस जमाने के लायक नहीं हो, तुम टिक नहीं सकोगे।

यह परमार्थ की नहीं, विज्ञान की बात है

यह बात पारमार्थिक नहीं है। सादी सी बात है। सारे गाँव को इकाई समझो, परिवार मानो और अनुकूल आयोजन करो। अगर हम इतना भी नहीं कर सके तो इस जमाने में हम जीने लायक नहीं हैं। यह असंभव है। दुनिया के दूसरे देशों में क्या-क्या हो रहा है, वहाँ विज्ञान कितना आगे बढ़ा हुआ है, क्या-क्या हलचलें वहाँ चल रही हैं, यह सारा हम नहीं सोचते हैं। परन्तु हमें सारा सोचना चाहिए। इसलिए फिलहाल हमारी कम-से-कम माँग यही है कि अपने पड़ोसी के साथ प्यार करो, गाँव को परिवार समझो। यह इस जमाने की बात है। आप कोई भी अखबार का पन्ना खोलकर देखिये, बड़े-बड़े अक्षरों में कौन-सी खबरें मिलेंगी? क्या ऋषभदेव की खबर मिलेगी? क्या राजस्थान की खबरें मिलेंगी? सारे भारत की खबरें मिलेंगी? नहीं! अखबार के पहले पन्ने पर बड़े-बड़े टाइपों में दुनिया की ख़बरें मिलेंगी। उनमें फिर कभी-कभी इस गाँव की भी खबरें होंगी। कल अगर यह गाँव आग में जलकर भस्म हो गया तो एकदम टेलिग्राम जायगा और राजस्थान के पेपरों में वह खबर आ जायगी। आपने बहुत पराक्रम किया है, ऐसा होगा। खैर, आप एक गाँव की बात छोड़ दें। इन दिनों हमारी खबरें दुनिया के हिसाब से बहुत छोटी दीखती हैं। इसलिए वह छोटे टाइपों में आती हैं और दुनिया की बड़ी-बड़ी खबरें, जैसे मंगल, शुक्र, चन्द्र पर कोई पहुँच सकता है, रॉकेट छोड़ा गया है, एक हजार मील ऊपर गया है, उसके और चंद्र के बीच इतना-इतना अन्तर है, ऐसी खबरें पहले पन्ने पर आती हैं याने दुनिया छोटी बन रही है, पृथ्वी छोटी बन रही है। पृथ्वी की कुछ खबरें पृथ्वी के कुल देश के लोग पढ़ते हैं और जानने में उत्सुकता भी बताते हैं। अभी दो-तीन दिन पहले पश्चिम के एक बहुत बड़े लेखक, जो इंग्लैण्ड के वाशिंदे हैं और जो हंगरी के हैं, वे हमारी यात्रा में दो दिन रह गये हैं। अब ऐसा क्या बड़ा काम हुआ है ग्रामदान, भूदान का? परन्तु दुनिया भर के लोग देखने आते हैं, क्योंकि दुनिया का हृदय एक रूप हो गया है। इधर की खबरें उधर और उधर की इधर के लोगों को मालूम हो जाती हैं। ऐसे जमाने में आप गाँव को परिवार न समझें और प्रेम का विस्तार न करें तो मैं लिख देता हूँ कि आपका प्रलय-काल नजदीक आया है। आपकी हस्ती खत्म होने आयी है।

मैं बहुत बड़ा आध्यात्मिक कदम उठाने को नहीं कहता हूँ। इतना ही कहता हूँ कि प्रेम को आपने घर में बन्द रखा है, वह खोल दो, व्यापक बनाओ, ताकि ग्राम-समाज बने। इतना तो बनना ही चाहिए। इसका मतलब यह नहीं है कि गाँव में रसोड़ा एक हो। ऐसी फिजूल बातें नहीं करनी चाहिए। हम कोई कुटुम्ब-व्यवस्था खड़ी करना नहीं चाहते हैं! परन्तु जहाँ तक सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था का सवाल है, वहाँ तक गाँव एकरस हो और प्रेम का स्थान पहला माना जाय। घर में क्या होता है? पुरुष एक रुपया कमाता है, स्त्री बारह आना, लड़का आठ आना और लड़की चार आना कमाती है। परन्तु वह सारी कमाई सारे घर की मानी जाती है। लड़की चार आना कमाती है, इसलिए चार आने का खायेगी और पुरुष एक रुपये का खायेगा, यह कानून हम घर में नहीं लागू करते हैं। घर में प्रेम का कानून चलता है, जिसमें सारी कमाई सारे घर की मानी जाती है और उसमें तो जो नहीं कमा सकता है, उसका भी हक है। इस तरह घर में हम बाँटकर खायेंगे। जैसी व्यवस्था घर में है, वैसी ही गाँव में करनी है। यह अहिंसा का सन्देश है।

अहिंसा की मौलिक दृष्टि

इस जमाने के लिए यह सन्देश आवश्यक है। सबसे बड़ी बात यही है कि "आत्मवत् सर्वभूतेषु"। इसका अनुकरण करके जैन लोग चिड़ियों को खिलाते हैं। यहाँ आते हुए देखा, प्रवेश-द्वार पर चिड़ियों के लिए मकान बनाया है, उसमें चिड़ियाँ आती हैं, दाना खाती हैं और गन्दगी भी करती हैं। इसमें हम अज्ञान की पराकाष्ठा मानते हैं। जो पक्षी कुदरत में घूमते हैं और अपना खाना पाते हैं, उनको मकान बनाकर खाना खिलाने की कोई वजह नहीं है। कोई गरज नहीं है। वहाँ आकर गन्दगी फैलाते हैं, उनकी विष्ठा वहीं रहती है और बदबू

फैलती है। चिड़ियों के रक्षण के नाम पर जो काम किया जाता है, विज्ञान के जमाने में यह बिलकुल फिजूल बात है।

शास्त्र ने इससे उलटा कहा है। शास्त्र कहता है कि किसीकी रक्षा करना तथा पालन-पोषण करने की जिम्मेवारी लेना भी हिंसा का ही प्रकार है। हिंसा केवल काटने में, मारने में नहीं है। पैदा करने में और पालन-पोषण में भी है। अपने कर्तव्य के बाहर हम जाते हैं तो हम गलत काम करते हैं। आज के जमाने में हम अपने प्रेम का विस्तार नहीं करते हैं तो विज्ञान कहेगा कि तुम इस जमाने के लायक नहीं हो! सारी सृष्टि के भरण-पोषण की जिम्मेवारी परमेश्वर पर है। हम कौन पालन करनेवाले हैं? जिन पशुओं से हम सेवा लेते हैं, उनका पालन-पोषण हम कर सकते हैं। उसमें हिंसा नहीं है।

सन् १९४९ में जयपुर मैं आया था। सवा दो महीना रहा था। उस समय मैं बीमार था। वहाँ एक बिल्ली मेरे खाने के समय आती थी। मैं अलग मकान में रहता था। बीमारी के बाद थोड़ा-थोड़ा दूध लेने लगा तो बिल्ली को भी थोड़ा-थोड़ा दूध देता था। पाँच-सात दिन तो ऐसे दूध उसको दिया। आखिर मैंने मन में हिसाब किया कि इस तरह मैं इस बिल्ली को सालभर में दूध दूँगा तो एक साल का नौ रुपया खर्चा आयेगा और हिन्दुस्तान में सात करोड़ घर हैं। उसमें ६३ करोड़ के दूध का खर्च होगा। बिल्ली का इस दूध पर कोई हक नहीं है, इसलिए उसे दूध देना गलत है। परमेश्वर ने बिल्ली के लिए खुराक पैदा की है, इसलिए मैंने बिल्ली को दूध देना बन्द कर दिया। मैं कबूल करता हूँ कि चंद दिनों तक मुझे यह काम कठिन लगा। वह नजदीक आये और खाना न दें, यह मुझे कठिन मालूम होता था। बिल्ली की सेवा लेते हैं तो वह चौकी भी करती है। नहीं तो चूहे बहुत ऊधम मचायेंगे। इस वास्ते बिल्ली का उपयोग समझ कर उसको देंगे तो क्षम्य होगा। परन्तु जहाँ सारे हिन्दुस्तान में १२॥ तोला दूध है और मुश्किल से हर मनुष्य को २॥ छटाँक दूध मिलता है, उसमें भी मिठाई बनती है तो बिल्ली को रोज नियमित दूध देना गलत बात है। बिल्ली है, कुत्ता है, अगर उनकी हम सेवा लेते हैं तो उनको खिलाना क्षम्य है। लेकिन पक्षियों को, चिड़ियों को खिलाना तुम्हारे कर्तव्य के बाहर है।

इस विषय में मतभेद हो सकता है। इसलिए मैं यहाँ चर्चा नहीं करना चाहता हूँ। इधर हम पक्षियों का पोषण करें, उधर मनुष्यों को हम ठगते हैं, चूसते हैं। इतना ही मुझे कहना है। विज्ञान-युग में कुदरत का पूरा लाभ उठाना जरूरी है। ऐसा आप करना चाहते हैं तो उत्पादकों को औजारों का उपयोग करने देना होगा। इस तरह औजारों का उपयोग करना चाहते हो तो गाँव में जो खेती है, वह गाँव की करनी होगी और हम बाँटकर खायेंगे, ऐसा तय करना होगा। हम मालकियत छोड़ेंगे। नये-नये औजारों का उपयोग करेंगे। इससे उत्पादन बढ़ेगा। बढ़ती हुई आबादी का पोषण होगा और विज्ञान-युग के लायक काम होगा। नहीं तो विज्ञान-युग में हम टिक नहीं सकेंगे।

यहाँ अभी थोड़ी जमीन दान में दी गयी है। आठ साल के बाद यह चीज सुनने लायक और सुनाने लायक नहीं है। अब तो ग्रामदान ही शोभा देगा। भूदान देना है तो १।६ हिस्सा देना चाहिए। हर गाँव ग्रामदान बनना चाहिए। इस काम में कांग्रेसवादी, समाजवादी इत्यादि सब पक्ष के लोग आ सकते हैं। ऐसी कोशिश यहाँ करनी चाहिए। कोशिश होने पर डूंगरपुर जिले में देखा गया कि काम हो सकता है। उदयपुर जिले में काम करने के लिए कार्यकर्ता नहीं मिलते हैं। राणाप्रताप के नाम से यहाँ ऐसा प्रताप सुनाया जाता है। राणाप्रताप को जाकर यह सुनाया जाय कि तुम्हारी भूमि में ग्रामदान-भूदान का काम करने के लिए लोग नहीं मिलते हैं। इस तरह तुम्हें हम सुनाते हैं, ताकि तुम हमें कुछ स्फूर्ति दोगे। इसलिए जिस किसी कोने में आप बैठे हैं, आपसे हम प्रार्थना करते हैं कि आप भगवान से प्रार्थना करें कि इस भूमि में लोगों को यह काम करने की सद्‌बुद्धि दें। ऐसा राणाप्रताप को मेरा नम्र निवेदन है।

● ● ●

प्रार्थना-प्रवचन

कार्या (राज०) ३-१-'५९

हम भारत की आत्मा को पहचानें

आज रास्ते में हमने जो दृश्य देखा, वह सचमुच आनन्दित करनेवाला था। हम चले आ रहे थे। बीच में एक गाँव मिला। उस गाँव में जितने घर हैं, उन सभी घरवालों ने अपने घरों में सर्वोदय-पात्र रखा है। मैं एक साल से कह रहा हूँ कि जितने घर उतने सर्वोदय-पात्र। आज उस गाँव ने उसे सार्थक कर दिखाया।

शहरों में अभारतीयता का प्रवेश

मैं अक्सर कहता हूँ कि सम्पूर्ण देश की बात तो छोड़िये, आप अभी तक गाँववालों को भी नहीं समझते हैं। हिन्दुस्तान की जनता प्रेम और त्याग की भूखी है। वह प्रेम करना जानती है। त्याग करने में भी पीछे नहीं रहती। भूख के मारे दम निकल रहा है, उस समय किसी तरह एक रोटी मिल जाय और उसी समय कोई भूखा आदमी आ जाय तो यही जनता उस रोटी में से भी आधी रोटी उसे दे देती है। यह यहाँकी जनता का स्वभाव है। इसीलिए मैं मानता हूँ कि सर्वोदय-पात्र हर घर में रखा जायगा। ऐसी बात हम करते हैं तो जहाँ तक देहात का ताल्लुक है, यह बात बनकर रहेगी। शहर में कुछ घरों में नहीं होगा। इसलिए कि शहरों में तरह-तरह की हवा बहती है। वहाँ सिर्फ भारत की हवा नहीं, बल्कि दूसरे देशों की भी हवा है। गाँव में अगर आप यह बताओ कि सर्वोदय-पात्र रखो तो वह रखा जायगा और रोज एक मुट्ठी अनाज उसमें डाला जायगा। यह अनाज शान्ति-सैनिक तथा शान्ति-स्थापना के काम में आयेगा। ऐसा समझाया जायगा तो रोज नियमित अनाज पात्र में डाला जायगा। देहात-देहात में यह कठिन नहीं है। वैसे शहर में भी कठिन नहीं है। उसके लिए सतत घूमनेवाले कार्यकर्ता चाहिए।

हमें गाँवों से सेवक मिलने चाहिए। मुझे विश्वास है कि वे जरूर मिलेंगे। शहर से भी सेवक मिलने चाहिए और मिलेंगे। किन्तु इन दिनों जो तालीम दी जा रही है, उससे लड़के आरामतलब बनते हैं। परमेश्वर की कृपा है कि अपने देश में स्त्रियों को शिक्षण कम है। इसलिए वे आलसी नहीं बनती हैं। नहीं तो आलसी बनेंगी और काम के लिए नालायक बन जायँगी। आज वैसा नहीं है। परन्तु मुख्य बात यह है कि जो नालायक शिक्षण आज दिया जाता है, उससे काम न करने की, बैठे-बैठे

खाने की, अच्छी-अच्छी चीजें खाने की सहूलियत मिल जाती है। शिक्षित लोग स्वयं अपने कमरे में झाड़ नहीं लगायेंगे। वे उसके लिए नौकर रखेंगे। ऐसी निकम्मी तालीम खत्म होनी चाहिए। आज उसी तालीम के कारण हमें कार्यकर्त्ता कम मिलते हैं।

मीरा के पथ पर

कार्यकर्ता कम होने पर भी यहाँ काम हो रहा है, थोड़ा ही क्यों न हो, काम हो ही रहा है। मैं यह जानता हूँ कि हिन्दुस्तान की जनता लंबी-चौड़ी किताबें याद नहीं रखेगी। परन्तु रोज एक मुट्ठीभर अनाज डालने की बात याद रखेगी। इसीलिए तो आज वह दृश्य देखने को मिला और उससे मुझे बहुत खुशी हुई। गाँववालों ने बताया कि हर घर में सर्वोदय-पात्र रखा है। लेकिन यहाँ कार्यकर्ता कहाँ हैं ?

यह मीरा का, राणा प्रताप का मुल्क है। यहाँ राणाप्रताप का प्रताप है और मीरा की भक्ति है, लगन है। इसीलिए यहाँ बिना कार्यकर्ताओं के काम होता है। बाबा के आने से कुछ लोग जरा आगे-पीछे दौड़ेंगे। बाबा चला जायगा तो ये कार्यकर्ता भी भाग जायँगे। ऐसे भगोड़े कार्यकर्ता यहाँ हैं। लेकिन लोग भगोड़े नहीं हैं। वे समझते हैं कि बाबा की आवाज धर्म की आवाज है। सरकार की मदद कहाँ तक ऊपर उठायेगी ? 'मेरे तो मुख रामनाम' ऐसा मीरा ने कहा है। लेकिन आजकल इन लोगों के मुँह में सरकार का नाम है। इसलिए लोगों को हम उनके पाँवों पर खड़े करना चाहते हैं और चाहते हैं कि वे अपने हाथों से काम करें। जो स्वयं काम करता है, उसे भगवान मदद करता है।

हम मिलकर काम करें तो बहुत काम होगा। लेकिन इन दिनों हाथों से हाथ टकराते हैं तो झगड़ा होता है। इसलिए हमारे हाथ जुड़ जायँगे तो बहुत काम बन सकता है। हर घर में सर्वोदय-पात्र और गाँव में सेवक होना चाहिए। यह बात ध्यान में रखिये। यहाँ समग्र-सेवा-संघ का काम हो रहा है। उसे परमेश्वर का आदेश मिला है कि सर्वोदय-पात्र का काम करे, कार्यकर्ताओं को तालीम दे। आप समग्र-सेवा-संघवालों को कह सकते हैं कि अनाज ले जाइये। इस तरह आप अपनी ताकत खड़ी कर दीजिये और सेवक भी खड़े कीजिये। यह भीलों का क्षेत्र है। भीलों में से काम करने के लिए सेवक निकलें। वे यहाँकी हवा में, यहाँकी धूप में, यहाँकी जमीन में पले व पैदा हुए हैं। उनमें से ही लोग मिलेंगे तो काम होगा। मेरा तो उनसे कहना है कि भाइयो, तुम आओ। मैं तुम्हारी राह देख रहा हूँ।

मेरी भूख या छह करोड़ लोगों की भूख !

आज यहाँ चार ग्रामदान मिले हैं। मैंने जरा नाराज होकर कहा कि कार्यकर्ताओं के अभाव में चार ही ग्रामदान मिले हैं। यह कुल क्षेत्र ग्रामदानी होना चाहिए। कार्यकर्ता ने कहा कि आपका लोभ बढ़ता जाता है। चार ग्रामदान लाये तो भी आपको संतुष्टि नहीं हुई ? मैंने कहा कि मेरा पेट छोटा-सा है। मैं इस पेट के लिए काम नहीं कर रहा हूँ। जो छह करोड़ लोग भूखे हैं, मेरा यह काम उनके लिए है। उन छह करोड़ लोगों के पेट की भूख मुझे सताती है। इसलिए चार ग्रामदान हुए तो क्या हुआ ? हिन्दुस्तान में ५ लाख गाँव हैं। वे सब-के-सब ग्रामदान होने चाहिए। डूंगरपुर व बाँसवाडा जिले में १५० ग्रामदान हुए हैं। उदयपुर में भी १०-११ ग्रामदान हुए हैं। इसपर भी मैं चिढ़ता इसलिए हूँ कि कार्यकर्ता न होने से इतना काम हुआ तो कार्यकर्ता होने से कितना काम होता ? आज ही मैंने पूछा कि इस जिले में इस काम के लिए पूरा समय देनेवाले कितने कार्यकर्ता हैं। उत्तर मिला—कोई नहीं है। धन्य है उदयपुर।

आज ही जवेरभाई से बात हो रही थी। वे आपके नौकर हैं। सरकार की ओर से गाँव-गाँव में कैसे काम होगा, यह देखने का उनका काम है। मान लीजिये, यहाँ सौ ग्रामदान होते हैं तो हम उनको क्या काम देंगे ?

हमारे गाँव के लोग सब समझते हैं। समझाने की देर है। शहरवालों को समझाना मुख्य काम है। अभी सीलिंग का प्रस्ताव हुआ है, लेकिन क्या सरकार कानून से जमीन छीनेगी ? आठ साल में हमने सरकार की शक्ल देखी है। यह काम कानून से नहीं, प्रेम से बनेगा। प्रेम से ही जमीन दी जायगी। इस्लाम ने कहा है कि 'मालिक खुदा है'। हिन्दू धर्म ने भी कहा है 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।' हम धरती के पुत्र हैं। धरती हमारी माता है। ईसाई धर्म में भी यही कहा है कि हम ईश्वर की सन्तान हैं। इसलिए यह सब धर्मों का कहना है। प्रेम से कहो कि हवा, पानी जैसे जमीन भी सबकी है। हमारे किसान समझते हैं। इसलिए उनके पास जाइये, समझाइये तो काम होगा। आज चार ग्रामदान जिन्होंने दिये हैं, उनको मैं धन्यवाद देता हूँ। थोड़ी सी तकलीफ उठाई तो इतना काम हुआ है। थोड़ा और काम बढ़ाओगे तो बहुत पुण्य हासिल होगा। • • •

मल हटते ही प्रकाश

ईश्वर का रूप हमारे हृदय में है, लेकिन वहाँ लोभ, क्रोध, मत्सर आदि दोष हैं, जिनके कारण भगवान ढँक जाते हैं। दोषों को हटायेंगे तो यह रूप दीख पड़ेगा। अन्दर की ज्योति जलती है वह ढक गयी है, इसलिए हम मन्दिर में देखने जाते हैं। वहाँ तो पत्थर की मूर्ति होती है, जो किसी कारीगर ने बनायी है। सारी दुनिया को बनानेवाला ईश्वर वह नहीं है। सुन्दर लालटेन है, परन्तु उसकी काँच काली-काली हो तो अन्दर की ज्योति स्पष्ट नहीं होती और स्वच्छ प्रकाश नहीं पड़ता। लालटेन का काँच साफ होते ही स्वच्छ प्रकाश होगा, अन्दर की ज्योति दीख पड़ेगी।

अनुक्रम

१. व्यक्तित्व के विकास...	भोपाल नगर	४ फरवरी '५९	पृ०	१४९
२. राष्ट्र-निर्माण के लिए...	वल्लभ नगर	२ फरवरी	,,	१५०
३. जैन लोग अहिंसा का...	ऋषभदेव	२७ जनवरी	,,	१५३
४. हम भारत की...	फतहपुर	३ फरवरी	,,	१५५

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ- प्रकाशन, राजघाट, काशी द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित

फोन : १२८५ तार—प्रकाशन, राजघाट, काशी।